International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 12, December - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

भारतीय दर्शन के निरूपण करने योग्य वषय

डॉ॰ पूनम शर्मा

भारतीय दर्शन की अनेक धाराएँ कई कालों में अभ्यस्त हुई हैं। तथा जो सांख्य, योग आदि अलग–अलग नामों से जतलाकर अनेकानेक सम्प्रदायों के पवर्त्तन का सबब बनीं। उनमें से प्रत्येक अपने मूल में कोई न कोई ऐसे असामान्य मौलिक तत्त्व या विलक्षण विचारधारा रखती है। जो अन्य दर्शनधाराओं से उसे विभक्त कर देता है। तथापि इनमें कुछ ऐसी सामान्य विशेषताएं भी पाई जाती हैं। जो यह संकेत करती हैं कि इनमें अधिकांश धाराओं का स्रोत एक ही है और इस प्रकार यह सिद्ध करती है कि भली भाँति ही कुछ ऊपरी भोदों के कारण इनमें भिन्नता दिखाई पड़ती है परन्तु अपने आन्तरिक वैभव की दृष्टि से यह सब एक ही है। चार्वाक दर्शन को छोड़कर भारतीय दर्शन की शेष सभी धाराएं एक ही विशेष प्रयोजन को लेकर प्रवृत्त हुई दिखाई देती हैं। वह विशेष उद्देश्य है दुःखों का अवरोध तापत्रय से झलसते हुए विश्व को देखकर, भारत की सर्वोच्च मेघा ने उसकी आत्यन्तिक और ऐकान्तिक निवृत्ति के लिए जिन उपायों का व्याख्यान किया है। वे ही 'दर्शन' के महनीय नाम से कथित है। इस तरह प्रायः सभी भारतीय दर्शनों के मूल में दुःख का वैमनस्य एक विशेष उद्वेश्य के रूप में विद्यमान दिखाई पड़ता है। इससे यह स्पष्ट है कि यदि जगत में दुःख की सत्ता ही न होती तो फिर भारतीय दर्शन की उत्पत्ति भी नहीं होती पाश्चात्य दर्शन भारतीय दर्शन से बिल्कुल भिन्न है। भारतीय दर्शन से पाश्चात्य दर्शन की विचारधारा नितान्त भिन्न है। प्रायः सभी भारतीय दर्शन चाहे वह बौद्ध दर्शन हो या सांख्य दर्शन हो या वेदान्त दर्शन हो सबने अपने–अपने दृष्टिकोण से दुखमय संसार से मुक्ति का उपाय ही बताया है। इसी प्रकार के कुछ अन्य विचार या प्रतिपाद्य भी इन दर्शनों से प्राप्त होते हैं जिन्हें इनकी समान विशेषताएँ माना जा सकता है। जो सामान्य विशेषताएं इस प्रकार हैं।

दुःख की सत्ताः– प्रायः सभी भारतीय दर्शन संसार को दुःखात्मक मानते हैं। महात्मा बुद्ध ने अपने चार आर्यसत्यों में दुःख को पूर्व आर्यसत्य माना है। सांख्य की दृष्टि में विश्व निरन्तर दुःखत्रय को अघात से पीड़ित रहता है – योग के अनुसार विचारशील प्राणी को यह सारा संसार दुःख रूप ही लगता है और इसलिए वे पाँच

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 12, December - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

प्रकार के क्लेशों से मुक्ति के लिए ईश्वर प्राप्ति के लिए प्रयत्न करता या उपाय बताता है। अन्य दर्शन भी जन्म, मृत्यु के रूप में अनेक प्रकार के दुःख मानते हैं। इससे छुटकारा पाने को मोक्ष कहते हैं।

दुःख का कारण अविद्या:– भगवान बुद्ध दुःख के कारण को दूसरा आर्यसत्य मानते हैं। जब दुःख है तो उसका कारण भी अवश्य होगा अन्य दर्शन भी इस सम्बंध में बौद्ध दर्शन का अनुसरण करते प्रतीत होते हैं। इन सभी दर्शनों ने दुःख के कारण के रूप में अज्ञान को माना है। इनका मानना है कि इस अज्ञान के कारण ही जीव इस दुखात्मक जगत् को सुख रूप मानकर उसका उपभोग करता है। और जिसके फलस्वरूप जन्म, मृत्यु रूपी दुःखों को प्राप्त होता है। अतः सभी दर्शनों ने इस अविद्या की निवृत्ति के लिए विभिन्न उपायों का प्रतिपादन किया है।

मोक्ष:– संसार के विभिन्न दुखों से मुक्त हो जाना ही मोक्ष कहा जाता है। यह सभी दर्शनों का पयोजन है और इसलिए इसे अंतिम पुरूषार्थ भी माना जाता है। किन्तु इसके स्वभाव के सम्बंध में विद्वानों में एक मत नहीं है। न्याय और वैशेषिक आत्मा की सदरूपावस्थिति को सांख्ययोग उसकी चित्तस्वरूपावस्थिति को और वेदान्त सच्चिदानन्दात्मरूप अवस्था को मोक्ष मानते हैं। प्रत्येक दर्शन की दृष्टि में मोक्ष का स्वरूप भिन्न है। किन्तु उसकी अवस्था को सभी स्वीकार करते हैं।

मोक्ष का साधन:– दुःखविरोधमार्ग को महात्मा बुद्ध चौथा आर्यसत्य मानते थे उनकी दृष्टि में यदि मोक्ष है तो उसके मार्ग का उपाय भी अवश्य है। इस सम्बंध में दर्शनों न जो उपाय बतलाए हैं वे मिलते जुलते ही हैं। जैसे– यम नियम का पालन चिन्ता की शुद्धि, चित्त की एकाग्रता ज्ञान आदि। किन्तु तरीका प्रत्येक दर्शन का अपना–अपना है।

नीति सम्बंधी प्रबंध:– भारतीय दर्शनों का एक अन्य तरीका भी है जिसमें हम प्राय यह देखते हैं कि संसार एक तरीके के अन्तर्गत चलता है। सूर्य, चन्द्र उदित और अस्त होना ऋतुओं का परिवर्तित होना रात और दिन का आना जाना यह सब एक ढंग से हो रहा है। वेदों में इस तरीके को ऋत नाम से अभिहित किया है। उसमें यह बतलाया गया है कि पहले ऋत और उसके बाद उससे सत्य

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 12, December - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

का प्रार्दुभाव हुआ सभी भारतीय दर्शन इस नीति संबंधी प्रबंध को भिन्न–भिन्न ढंग से मानते हैं।

पूर्व जन्म की धारणा:– नीति के अनुसार आत्मा का एक शरीर को त्याग कर दूसरे शरीर को ग्रहण करने का क्रम निरन्तर चलता रहता है। इसे ही जन्म और मृत्यु कहते हैं। गीता के अनुसार प्रत्येक जीव का जन्म और उसके बाद उसकी मृत्यु अनिवार्य है। इस अदृष्ट कर्म के तीन रूप हैं। क्रियमाण, संचित और प्रारब्ध समस्त कर्मों के फल का योग एक जन्म में ही नहीं भोगा जा सकता। अतः उसे भोगने के लिए जीव को भिन्न–भिन्न शरीर को धारण करना पड़ता है। चावार्क दर्शन को छोड़कर अन्य सभी दर्शन इस कर्म के फल की श्रृंखला को मानते हैं। किन्तु पूर्नजन्म का यह सिदान्त आत्मा को नित्य माने बिना सम्भव नहीं है। इसलिए अधिकांश दर्शन आत्मा में अन्य गुणों के अतिरिक्त नित्यत्व गुण भी मानते हैं। चुँकि पूर्नजन्म का आधार आत्मा ही है इसलिए प्रायः सभी दर्शन आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं। बोद्ध आत्मा के अस्तित्व को नहीं मानता है। किन्तु उसका कार्य उन्होंने पंचस्कन्धों के द्वारा सम्पादित कर लिया है। आत्मरूप एक विशेष प्रकार के तत्त्व को स्वीकार करने पर भी दर्शनों में उसके स्वरूप के सम्बंध में मतभेद है। सांख्य दर्शन में इसे पुरूष के रूप में माना गया है। यह उसके अनुसार नित्य, विभु, चैतन्य, अकर्त्ता है। योग दर्शन भी इसे इसी प्रकार मानता है। मीमांसा इसे नित्यत्व और विभुतव को स्वीकार करता है। किन्तु चैतन्य को उसका आचानक आया हुआ रूप मानती है। वेदान्त के अनुसार, आत्मा सच्चिदानंदस्वरूप नित्य शुद्ध है। न्याय–वैशेषिक आत्मा को अविनाशी स्वीकार करते हैं लेकिन इसके साथ ही इसे सुख दुःख गुणों से युक्त भी मानते हैं। इस प्रकार उनकी दृष्टि में आत्मा सगुण है। वेदान्तिक उसे निगुर्ण मानते हैं।

सृष्टि:– भारतीय दर्शनों का एक दिया जाने वाला विषय सृष्टि भी है। किन्तु इसके कारण और प्रक्रिया के विषय में मतों में भिन्नता है। सांख्य की दृष्टि में सृष्टि का मुख्य कारण प्रकृति है किन्तु वेदान्त में इसका मुख्य कारण अज्ञान को कहा गया है। वेदान्त के अनुसार सृष्टि असत्य कि वा मिथ्य और भ्रम है। किन्तु सांख्य के अनुसार प्रकृति जन्य होने के कारण नित्य और सत्य है। इसी प्रकार अन्य दर्शनों

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 12, December - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

में भी सृष्टि – प्रक्रिया का अपने–अपने ढंग पर विस्तार से विवेचन उपलब्ध होता है।

कार्यकारणवादः– प्रत्येक कार्य की उत्पत्ति किसी न किसी कारण से होती है और किसी कारण से उत्पन्न होने वाला कार्य उसी के अनुसार गुण वाला होता है। इसी सिद्धान्त को कार्यकारणवाद का सिद्धान्त कहते हैं। भारतीय दर्शनों में इस सिद्धान्त का बहुत महत्त्व है। किन्तु इसके स्वरूप के सम्बंध में मतभेद भी पाया जाता है। जैसेः– सांख्य दर्शन अव्यक्त प्रकृति के ही संसार का कारण मानता है और यह भी मानता है कि यह जगत् रूप कार्य अपनी उत्पत्ति से पहले अव्यक्त रूप में विद्यमान रहता है और उसी से उत्पन्न होकर उसी में विलीन हो जाता है। सांख्य के अनुसार कोई भी कार्य जिस अव्यक्त रूप में कारण में रहता है उसी से उसका विकास और उत्पत्ति होती है। इसी को परिणाम का सिद्धान्त भी कहते हैं। इसके विपरीक्त – वेदान्त ब्रह्म से संसार की उत्पत्ति के सम्बंध में विवर्तवादी है। न्याय के अनुसार कार्य अपनी उत्पत्ति से पूर्व कारण में विद्यमान नहीं रहता है। इसलिए उसे असत्कार्यवादी कहते हैं। बौद्ध के अनुसार समस्त भाव पदार्थ क्षणिक होते है। असत् से सत् की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार अन्य दर्शनों के भी इस विषय पर अपने–अपने दृष्टिकोण हैं।

प्रमाणवादः– भारतीय दर्शन के अनुसार किसी भी वस्तु या प्रमेय की सिद्धि प्रमाण के अभाव में नहीं हो सकती है। इसलिए सभी दर्शनों में प्रमाणों का निरूपण एक मुख्य विषय के रूप में किया गया है। न्याय में इसका निरूपण इस प्रकार प्रमुखता के साथ किया गया है कि उसका नाम ही न्यायशास्त्र के अतिरिक्त प्रमाणशास्त्र हो गया है। अन्य दर्शनों में भी प्रमाण की संख्या और उनका विस्तार से विवेचन मिलता है। जहाँ सांख्य योग, प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द केवल इन तीन प्रमाणों को मानते हैं। वहीं न्याय, वैशेषिक इन तीन प्रमाणों के अतिरिक्त चौथी उपमान प्रमाण भी मानते हैं। अद्वैव वेदान्त अर्थापत्ति और अभाव इन दो प्रमाणों को मानता है। इस तरह पौराणिक वेदान्त के उपर्युक्त छह प्रमाणों के अतिरिक्त ऐतिह्य और सम्भव नामक और दो प्रमाण को मानता है। बौद्ध केवल दो प्रमाण मानता है और चार्वाक केवल एक प्रमाण मानता है। इस प्रकार जिस दर्शन को जितने प्रमाणों की अवश्यकता पड़ी उसने उतने प्रमाण माने हैं।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 12, December - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

संदर्भ सूचि–

1. भारतीय दर्शन – डॉ॰ श्री कान्त पाण्डेय
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास – बलदेव उपाध्याय
3. गीता –डॉ॰ कर्ण सिंह
4. भारतीदर्शन – उमेश मित्र
5. भारतीयदर्शन का इतिहास – डॉ॰ रामकृष्ण आचार्य